शान्ति मन्दिर द्वारा प्रकाशित यह ई-पत्रिका आप सबको समर्पित है ।

सिद्ध मार्ग

© Shanti Mandir जनवरी २०१२, संस्करण ७

जिस परमात्मा को मैं प्राप्त करना चाहता हूँ, जानना चाहता हूँ, अनुभव करना चाहता हूँ, वो कहीं और नहीं, सदैव मेरे साथ है।

प्रिय आत्मन्, सप्रेम जय गुरुदेव! सिद्ध मार्ग ई-पत्रिका का सातवाँ अंक प्रस्तुत है । इस अंक में गुरुदेव महामण्डलेश्वर स्वामी नित्यानन्द जी द्वारा कुछ समय पूर्व जयपुर में दिये गये प्रवचन के सम्पादित अंश प्रस्तुत हैं ।

गुरुदेव का प्रवचन

हम आज एक मिलन के लिए ही यहाँ आये हैं परन्तु वो बाहर का नहीं आन्तरिक मिलन है यानी जीव का परमात्मा के साथ । हालांकि उस मिलन को कराने वाले एक सद्गुरु होते हैं, उनके पास जाकर उनका सान्निध्य प्राप्त करके जिस तरह वो हमें जीने के लिए, रहने के लिए, करने के लिए कहते हैं वैसे ही अगर हम उनके बताये अनुसार जीवन चलाते हैं तो हम यह अनुभव करेंगे कि शनैः शनैः जीवन में परिवर्तन होते होते हमारे अन्तर से ही हमें वो अनुभव होने लगता है कि जिस परमात्मा को मैं प्राप्त करना चाहता हूँ, जानना चाहता हूँ, अनुभव करना चाहता हूँ, वो कहीं और नहीं, परन्तु सदैव मेरे साथ है, मेरे अपने अन्दर ही है, परन्तु मनुष्य जीवन भर भटकता है । मनुष्य हमेशा यह सोचता है कि मैं जो चाहता हूँ वो मुझे बाहर से प्राप्त

अपनी ही स्वतः की संगति में समय बिताओ। अगर खुद को ही खुद की संगति पसन्द नहीं, फिर उसे दूसरों पर क्यों थोपना?

होगा। जब वो परमात्मा की खोज में निकलता है तो पहले वो बाहर खोज करता है। परन्तु बाबा कहते थे- आप में ही आप होकर आपका राम रहता है कि वो परमात्मा और कुछ नहीं, और कोई नहीं, आप स्वतः ही परमात्मा के अंश हो, उस परमात्मा से भिन्न नहीं हो। हमारे यहाँ श्रीमद्भगवद् गीता के ऊपर एक अच्छे वक्ता हुए हैं स्वामी चिन्मयानन्द जी। वह विश्वभर में श्रीमद्भगवद् गीता, उपनिषद् के ऊपर प्रवचन करते थे। उन्होंने एक बहुत अच्छी बात कही है कि "spend some time in your own company. If you cannot enjoy yourself, why inflict it upon others" अपनी स्वतः की संगति में ही समय बिताओ। अगर खुद को ही खुद की संगति पसन्द नहीं, फिर उसे दूसरों पर क्यों थोपना? जब हम अकेले हों, टी.वी ना चलता हो, रेडियो ना चलता हो, और कोई बैठा हुआ चर्चा न करता हो और ना कोई पुस्तक हो, जिसमें से हम कुछ पढ़ रहे हों तो हम स्वतः ही अपना आनन्द नहीं ले पाते तो उसका दुःख है, दर्द है, कष्ट है, वो दूसरों पर क्यों थोपते हो। अधिकांशतः हम कहीं भी किसी के पास जाते हैं तो अपना बोझ हलका करने के लिए जाते हैं। अपना जो कुछ भी कष्ट हो, दुःख हो, दर्द हो, वो किसी को हम सुनाने के लिए जाते हैं। कोई आ जाता है तो हम तुरन्त कह देते हैं, अरे! वह आ गया क्योंकि हम को भी पता है वो कुछ बताएगा कुछ सुनाएगा, परन्तु सन्तजन ज्ञान देते हैं कि दुःख, इसका निवारण हमें अपने आप ही करना पड़ेगा, क्योंकि दुःख को पैदा भी हमने ही किया है। उसकी उत्पत्ति

सद्‌गुरु के पास जब हम जायें तो वास्तव में न वहाँ कहने की आवश्यकता है, न वहाँ पूछने की आवश्यकता है।

और कहीं से हुई नहीं, हम ही अपने आप से, अपने ही मन में, अपने अन्तर में, उसको लिए हैं वो कहीं और से आया नहीं, तो इसके लिए बुद्धि, विवेक, समझ के अनुसार उस दुःख को हमें ही दूर करना है। जीवन किस तरह से अच्छा हो, इसके लिए सर्व प्रथम हम सब सज्जन बनें। हालांकि किसी से भी पूछूं कि क्या तुम दुर्जन हो? तो बोलेगा नहीं, मैं तो सज्जन हूँ, सबसे अच्छा सज्जन मैं ही हूँ। परन्तु व्यवहार में एक दूसरे के साथ जब हम बैठते हैं, बोलते हैं, जो कुछ भी करते हैं, उस समय मेरा व्यवहार, मेरा भाव, क्या है, कैसा है, क्या मैं एक वास्तविक एक सज्जन व्यक्ति के रूप में सामने वाले के साथ व्यवहार करता हूँ, क्या मेरी जिह्वा पर मिठास, मुखारबिन्द पर आनन्द, खुशी, प्रेम,और क्या मेरे हृदय में एक ऐसा भाव उभर आता है कि यह सज्जन व्यक्ति जो मेरे सामने आया है, यहाँ से संतुष्ट होकर, जो उसको चाहिए यहाँ वो प्राप्त करके मेरे पास से जाए, ऐसी भावना अगर हममें जागृत होती है तो हम कह सकते हैं कि मैं एक अच्छा व्यक्ति, एक सज्जन हूँ। हमारे यहाँ कहा जाता है कि नदी कभी अपना जल पीती नहीं, वृक्ष कभी अपना फल खाता नहीं, वृक्ष को काटने वाला भी अगर उसके नीचे बैठ जाता है तो वृक्ष उसको छाया, विश्राम देता है, तो हम सन्त के पास भी जब जाते हैं, सन्त भी अपने उदार हृदय से हमको अपने बारे में समझाते हैं, अपने बारे में बताते हैं, हालांकि हम अधिकांशतः अपना दुःख दर्द सब लेकर जाते हैं। सद्‌गुरु के पास जब हम जायें तो वास्तव में न वहाँ कुछ कहने की आवश्यकता है, न पूछने की। अगर उस वातावरण में हम शान्ति से बैठ सकते हैं, स्थिर होकर कुछ ग्रहण कर सकते हैं, तो वो

ये बुद्धि, ये समझ, हम में आ जाए कि मैं उस परमात्मा से भिन्न नहीं हूँ, जिस परमात्मा से हमको सब कुछ प्राप्त होता है।

ही काफी है। परन्तु हमारा चंचल मन हमें कहता है, जरा बता दो, जरा बोल दो। अगर वो कुछ आशीर्वाद, कुछ विशेष दें, तो मेरी समस्या हल हो जायेगी। परन्तु अगर हममें वो बुद्धि आ जाए कि मैं किसी सन्त के सान्निध्य में आ गया हूँ, यही एक सबसे बड़ा आशीर्वाद है। क्योंकि नहीं तो हमारी घड़ी, हमारा मन, हमारी डायरी यही कहेगी कि भाई हम तो बहुत व्यस्त हैं, सन्त के पास बहुत समय है, वो तो वैसे ही पड़े रहते हैं, अपने आश्रम में। कभी भी हम उनके पास चले जाएँगे। सन्त वैसे ही जैसे हमारे दादा गुरुजी थे। वो अपने एक स्थान में गणेशपुरी में रहते थे, न उनका कहीं आना, न कहीं जाना, तो मन यही सोचता है कि वो तो कभी भी मिल जाते हैं, कभी भी हम चले जाएगे। परन्तु सन्त भी बोल देते है कभी कभी, कोई व्यक्ति आता है, तो उसको बोल दो कि मैं नहीं हूँ। जो सेवा में होता है वो सोचता है कैसे मैं उसको बोलूँ उसको पता है कि आप हमेशा यहीं रहते हो, यहीं रहते हुए उसको कैसे बताऊँ, परन्तु सन्त कहते हैं कि कुण्डी लगा दो, उसको बोलो कि चले जाओ, क्योंकि सन्त भी ये समझते हैं कि वो आया है अपना दुःख दर्द लेकर और उसको यह लगता है कि उसके पास समय नहीं है। सन्त के पास समय है तो उसको भी थोड़ी बुद्धि तो देनी पड़ेगी कि सन्त भी कुछ अपनी मस्ती में, अपने आनन्द में,अपने आप में मस्त रहते हैं। तो हम भी अपने जीवन में सोचें, विचार करें हर व्यक्ति हमारे पास कुछ न कुछ चाह लेकर आता है। हम ये सोचें कि मैं कौन हूँ, मैं क्या दे सकता हूँ, परन्तु ये बुद्धि, ये समझ, हममें आ जाए कि मैं उस परमात्मा से भिन्न नहीं हूँ, जिस परमात्मा से हमको सब कुछ प्राप्त होता है। अगर कोई व्यक्ति मेरे पास आता है, तो इस

समुद्र से वो बाल्टी ले जाए या टैंकर भर ले जाए समुद्र तो विशाल है और हमें तो सिर्फ हाँ कहना है।

समय में मैं उस परमात्मा का एक निमित्त हूँ और मेरे माध्यम से उस व्यक्ति को कुछ मिल सकता है, तो मैं क्यों नहीं दूँ । आप विचार कीजिए हम बंबई के पास विशाल समुद्र के समीप खड़े हैं, हमारे पास कोई आता है, और कहता है कि समुद्र से जल लेना चाहता हूँ। हालांकि समुद्र हमारा है ही नहीं, समुद्र से मेरा कोई लेना देना नहीं, फिर भी कोई व्यक्ति पूछता है कि भाई इस से जल ले लूँ और वो बाल्टी लेकर आया होता है, हम उस को कहते हैं तू बस बाल्टी भर ही जल ले जाएगा! कंजूसी हमारे दिल की, छोटापन हमारे दिल का, समुद्र से वो बाल्टी ले जाए या टैंकर भर ले जाए समुद्र तो विशाल है और हमें तो सिर्फ हाँ कहना है। हालांकि हमारे हाँ या ना से कुछ लेना देना नहीं, परन्तु फिर भी वो व्यक्ति पूछ रहा है। उदाहरण के लिए आपको जरा बात बता रहा हूँ कि विशाल समुद्र से वो बाल्टी ले जाए या लोटा ले जाए, टैंकर ले जाए, क्या हमको ऐसी भावना होगी या अनुभव होगा कि अरे! समुद्र में से एक टैंकर जल कम हो गया, पता भी नहीं चलेगा हमें। इतने विशाल समुद्र से कोई एक हजार लीटर ले जाएगा तो कहाँ पता चलेगा कि एक हजार लीटर जल ले करके गया है। तो वैसे ही यह प्रभू की विशाल सृष्टि में, विशाल चैतन्य समुद्र में, हमें अगर कुछ लेना है, कुछ देना है तो आप यही सोचिए, विचार कीजिए कि भगवान के विशाल समुद्र में से कोई एक लोटा जयपुर का लेकर, दिल्ली में जाकर के डाल रहा है। कोई दिल्ली वाला पुरुष दिल्ली से ले आकर जयपुर में डाल रहा है। समुद्र में कुछ हो नहीं रहा है। हालांकि हम लोगों को लगता है हमारा जेब हलका हो गया, भारी हो गया,

अच्छा जीवन जीना है तो सज्जन बनना है। सज्जन मृदु होता है, सज्जन मधुर होता है ।

परन्तु वास्तव में जो समुद्र है,जहाँ से यह सब आता है वहाँ इस हलचल से कुछ होता नहीं। मैं यह इसलिए बता रहा हूँ क्योंकि किसी ने पूछा, जीवन अच्छी तरह से कैसे जियें इसके बारे में कुछ बताएँ। तो अच्छा जीवन जीना है तो सज्जन बनना है। सज्जन मृदु होता है, सज्जन मधुर होता है, सज्जन को सिर्फ देखकर हमें अच्छा लगता है कि आज हमारा दिन अच्छा जाएगा क्योंकि हमारे मन में एक भावना है कि ये व्यक्ति बहुत अच्छा है। सज्जन के कई गुण हैं। यह सब बड़े बड़े गुण हम सब अपने जीवन में अपना सकते हैं । जहाँ कहीं भी हम जाऐं, स्वतः भी प्रफुल्लित होकर जाएँ और जो कोई भी हमको देखे वो भी हमको देखकर प्रफुल्लित हो जाए । हमारे बाबाजी एक विनोदात्मक कहानी कहा करते थे कि एक दिन एक राजा टहलने निकला, तो टहलते टहलते बहुत सारे लोग मिलते हैं। किसी को हम जानते हैं किसी को नहीं जानते, ऐसे राजा भी टहलने निकला तो टहलते टहलते उसके सामने एक दरिद्ररूपी व्यक्ति आ गया, बाबाजी हमेशा उसे नासरुद्दीन नाम से पुकारते थे। सामने आया तो राजा ने अपने सिपाही को भेजा कि ये कहाँ सुबह सुबह आ गया मेरे सामने। अपना आज का दिन तो खराब हो गया। इसको ले जाओ और पचास लाठी मारो कि फिर सुबह सुबह यह राजा के सामने नहीं आये। सिपाही लोग उसको पकड़ कर ले जाते हैं। जब ले जाते हैं तो वो पूछता है कि भाई कहाँ ले जा रहे हो, मैं तो घूमने निकला हूँ, सुबह सुबह टहलने निकला हूँ। सिपाही बोले-तुम सुबह सुबह राजा के सामने यहाँ आ गये उसका दिन आज खराब हो जाएगा इसलिए तुम्हें पचास लाठी मारने के लिए ले जा रहे हैं। ताकि आइन्दा तुम यह गलती नहीं

सज्जन को सिर्फ देखकर हमें अच्छा लगता है कि आज हमारा दिन अच्छा जाएगा क्योंकि हमारे मन में एक भावना है कि ये व्यक्ति बहुत अच्छा है।

करोगे कि सुबह सुबह राजा के सामने आओ। उसने कहा सिपाही जो दंड तुम दोगे स्वीकार हैं, परन्तु पहले जरा एक शब्द राजा से बोल देता हूँ। सिपाही बोले पहले ही राजा ने पचास लाठी दंड बोला है, कहीं दुगना ना हो जाए, सौ ना हो जाए। नासिरुद्दीन ने बोला कोई बात नहीं, सौ हो जाएगा तो सौ सह लूँगा परन्तु राजा से एक वाक्य, एक शब्द मुझे कहना है। तो उसे ले जाते हैं राजा के पास तो राजा थोड़ा क्रोधित हो जाता है कि जिसे मैंने भगा दिया लाठी मारने के लिए, वह पुनः आ रहा है। सिपाही बोला नहीं महाराज यह लाठी खाने से पहले आप से कुछ कहना चाहता है, निवेदन किया है कि अगर दंड दुगुना भी हो जाए तो भी वह सह लेगा, परन्तु आप से कुछ कहना है। नासिरुद्दीन ने कहा- महाराज पहले तो मुझे बहुत खुशी हुई कि आज सुबह सुबह मुझे मेरे महाराज का दर्शन हुआ कि आज मेरा दिन बहुत बढ़िया होगा क्योंकि सुबह सुबह महाराज श्री का दर्शन किया परन्तु अब ऐसा लगता है महाराज का अनुभव मेरे लिऐ बहुत खराब हो गया, सुबह सुबह मैंने जो महाराज श्री का दर्शन किया। यदि नहीं करता तो बहुत अच्छा होता। राजा बोला क्यों भाई?वह बोला आप का मैंने दर्शन किया इसके लिए मुझे ये सिपाही लोग ले जाकर पचास लाठी मारने वाले हैं। अगर आप का दर्शन मैंने नहीं किया होता तो मुझे कोई लाठी नहीं मारता हालांकि मैंने सोचा राजा जी का दर्शन बहुत अच्छा है परन्तु आज से मैं कभी आपका सुबह दर्शन नहीं करूंगा, क्योंकि मैं कभी लाठी नहीं खाना चाहता हूँ। राजा भी बुद्धिमान था वह समझ गया कि यह क्या कहना चाहता है। समझो अगर यह बात पूरे गाँव में जाकर कह दे कि सुबह-सुबह

हम यह प्रयास करें,कि मेरे से हमेशा सद्कर्म हों क्योंकि सज्जन व्यक्ति हमेशा ही यह अपने अन्तर में चाहेगा कि कभी कुकर्म मेरे से न हो हमेशा सद्कर्म ही हो।

कोई महाराज का दर्शन न करे । राजा ने कहा - तुम चले जाओ यहाँ से। राजा भी विचार में पड़ गया कि मेरे दर्शन से, जो शुभ होना चाहिए ,अच्छा होना चाहिए, मैं तो उस को दंड देकर दुःखी कर रहा था। कहने का मतलब यह है कि हम यह सोचते हैं, कौन किसके लिए दुःखी है परन्तु हम यही सोचें, यही करें कि मैं ऐसा सज्जन व्यक्ति बनूँ जिसका लोग दर्शन करने के इच्छुक तो हों ही, साथ-साथ दर्शन करके उनको ऐसा अपने हृदय में लगे, मन में लगे कि इनका दर्शन आज हो गया तो मेरा कार्य है,जो कुछ भी मैं करने जा रहा हूँ,अच्छा होगा ही । तो इसके लिए हम यह प्रयास करें कि मेरे से हमेशा सद्कर्म हों क्योंकि सज्जन व्यक्ति हमेशा ही यह अपने अन्तर में चाहेगा कि कभी कुकर्म मेरे से न हो हमेशा सद्कर्म ही हो। क्योंकि वो सद्कर्म करेगा तभी तो उसके मुख पर, अन्तर में शान्ति और आनन्द का अनुभव होगा।

फिर एक बार सभी का बड़े प्रेम सम्मान से हार्दिक स्वागत ।

सद्गुरुनाथ महाराज की जय ।।